P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-V* January- 2016

साठोत्तरी हिन्दी कविता : विभिन्न परिदृश्य

सारांश

साठोत्तरी हिन्दी कविता का हर कवि अपनी शक्ति के क्षेत्र में दुर्दम्य है। नयी कविता से आज तक की काव्य यात्रा में मूल्यों की जो अनुगूंज है, इन कविताओं में मुखरित है। कवि स्वयं सृजनकर्ता है और अपना आलोचक भी। युगीन सामयिकता को ध्यान में रखकर जिस ''बदलाव'' की बात साठोत्तरी कवि करते हैं उनमें वजन है। सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन के साथ कुंठाजन्य स्थितियां पैदा हुई हैं, उनके निराकरण के लिए साठोत्तरी हिन्दी कवि की लेखनी अनवरत उठती रही है।

दलबीर सिंह
अनुबंधित प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
सफीदों, जीन्द

मुख्य शब्द : साठोत्तरी हिन्दी कविता, समाजवाद।

प्रस्तावना

आज की कविता में महानगरीय व्यथा के अनबूझे चित्र मिलते हैं। विज्ञान के आविष्कारों से होने वाले परिवर्तनों को अपनी पैनी निगाहों से देखकर सृजन के लिए संकल्प को लेकर ये कवि जय यात्रा पर चले हैं वह अपने परिवेश को प्रतिबिम्बित करने में पूर्ण सक्षम हैं।यह नया मानसिक बोध आध्यात्मिकता से शून्य है। शहरी जीवन का खाका, राष्ट्रीय स्थिति, मानव का ह्रास तंग गलियों के इन मसीहाओं ने खींचा है। यद्यपि भौतिक उन्नति मनुष्य कि उन्नायक है परंतु मशीनों की हुकूमत ने सब कुछ खोखला कर दिया है। साहित्य राजनीतिक दुराग्रह से आवेष्टित होन के कारण अपनी ''इमेज'' को खोता जा रहा है। धर्म, दर्शन, राजनीति, अर्थ और प्रकृति के बहुआयामी विषयों पर लेखनी चलाते हुए कवियों को बराबर इस बात का ध्यान रहा है कि मानसिक उलझनें काव्य के पथ को अनिर्दिष्ट न कर दें। विशाल यांत्रिक व्यवस्था की कथित कल्याणकारी योजनाओं ने भविष्य पर तुषार पात किया है। समय के साथ ध्वस्त होते मूल्यों ने जो खण्डन पैदा किया है युवावर्ग उससे विशेष रूप से प्रभावित हुआ है। ये समस्याएँ क्या भटकाव का समाधान पा लेने देंगी ? कवियों के समक्ष ढहती इस बेनींव की दीवार को सुदृढ़ बनाने का प्रश्न है। हर क्षेत्र में अराजकता है। विसंस्कृतिकरण के इस दौर में राष्ट्रीय अखण्डता का प्रश्न उभर रहा है। असम, पंजाब, गुजरात, कर्नाटक, जम्मू–काश्मीर की साम्प्रदायिक समस्याओं ने एक सवाल पैदा कर दिया है। साहित्यकारों के कंधे पर एक बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ी है। निर्वाह करते रहने के प्रयास से हो कोई सही विकल्प खोजकर इस दिशा में एक सुनिश्चित संकेत दे सकते हैं।

''विज्ञान ऐसे प्रत्ययों जैसे काल, दिक्, उर्जा आदि, को स्वीकार करता है जिनकी सत्ता दृष्टि सापेक्ष नहीं है, पर अनुभूति सापेक्ष अधिक है।''

विज्ञान की स्थापना, कथन या सिद्धान्त उसके सत्य पर आधारित रहता है जो सापेक्ष रूप में अर्थ और सत्य को प्रेषित करता है।

''सत्य के निरपेक्ष होने की धारणा पारम्परिक रही है पर वैज्ञानिक चिन्तन ने ''सत्य'' को विकास क्रम के साथ देखने का प्रयत्न किया है।''

रचनाकार का सत्य परम्परा से निरपेक्ष होता है जिसे वह देखने की सतत् चेष्टा करता है।

''रचनाकार हमेशा शब्द को संवेदना और बोध के स्तर पर झेलता है और एक दार्शनिक और वैज्ञानिक शब्द को अधिक अवधारणात्मक रूप में ग्रहण करता है। पर दोनों शब्द को किसी न किसी स्तर पर झेलते अवश्य हैं। ये शब्द ही साक्षात्कार के माध्यम होते हैं क्योंकि इन्हीं के द्वारा सत्य के तन्तुओं का निर्माण होता है।'' वैज्ञानिक धारणा के आधार पर सत्य का चिंतन शब्द और सत्य की धारणा पर आधारित है। इसका विकासक्रम संवेदनापरक है।

''शब्द'' और सत्य–ये दोनों जो
सदा एक दूसरे से तन कर रहते हैं
कब कैसे किस आलोक स्फुरण से इन्हें मिला दूं
दोनों जो हैं बन्धु, सखा, चिर सहचर मेरे।''

वैज्ञानिक चिन्तन में ''सत्य'' शब्द प्रतीकों का माध्यम से व्यक्त हुआ है। कवि मानस पर इसी सत्य को उद्घाटित करता है,

''एक वृत्त है
जिसमें खो जाता है हर आकार।''

वैज्ञानिक दर्शन में अदृश्य प्रत्ययों को भी मान्यता प्राप्त हुई है। इस द्वन्द्वमय युग में वैज्ञानिक धारणाएं हर पक्ष को पभावित करती हैं, दिनकर ने 'उर्वशी' में साठोत्तरी कविता में वैज्ञानिक चिन्तन के अभौतिक दोनों रूप मिलते हैं। यान्त्रिक से जन्मी भौतिकता व बिखराव की धुंधली आकृतियों के अक्स के साथ ही इस कविता में वैज्ञानिक दर्शन का तात्विक विवेचन भी मिलता है। अणु, परमाणु, दिक्, काल उर्जा की वैज्ञानिक प्रस्थापनाओं से साठोत्तरी कविता की चिन्मय आकृति तर्क के परत दर परत होने वाले नये का आभास कराती है। आस्तिकता, कंपन, उल्लास, गति की प्रवाहशीलता के परिप्रेक्ष्य में जन्मने वाला बोध 'साठोत्तरी कविता में ''कवि सत्य'' बना है मुक्तिबोध जिन्हें अज्ञेय के साथ हम नयी कविता के जनक के रूप में याद करते हैं। यह बोध ''चांद का मुंह टेढ़ा है'' में बुद्धि, सत्य और यान्त्रिकता के सच को उद्‌भाषित करता है। ज्ञान अपने में सर्जनात्मक है ओर यह गतिशील है। विज्ञान इसकी आधारशिला बना है–

''वैसा ही बुद्धिमान अविरत
यंत्रबद्ध कारणों से सत्य हूं।''

विज्ञान ईश्वर के ''अस्तित्व'' को मानव जीवन का सापेक्ष रूप मानता हैं

''ईश्वरीय जग भिन्न नहीं है
इस गोचर जगती से।
इसी अपावन में अदृश्य वह
पावन सना हुआ है।''

विज्ञान ने परमाणु भावना को केवल भौतिक प्रत्यय नहीं माना है पदार्थ एक ऐसा तत्व है जिसके प्रति मन आकर्षित होता है, पर उस तक पूर्णरूप से नहीं पहच पाता है।''

''आखों के सामने जल प्रपात की तरह
एक अतीत से दूसरे अतीत तक
बहते रहते है दृश्य।
पानी से सारे और सफेद हो गये वे दिन,
जिनकी मृतात्माएं किसी रसायनशाला में
प्रयोग के लिए रख दी गयी हैं। इस
झूठे आश्वासनों के बीच कि वे
जी उठेंगी कभी तो,
लेप और लोशन में लिपटी दफन के लिए
पिरामिड हो गयी हैं आँखों के सामने।''

''विज्ञान के दो चेहरे हैं। जो विध्वंसात्मक हैं, ज्यादा भयानक है, इससे मानवता को सिर्फ एक ही चीज बचा सकती है–और वह है साहित्य मैं समझता हूं कि साहित्यकारों की परीक्षा की घड़ी आ गयी है।'' पृष्ठ भूमि है। वैज्ञानिक मान्यताएं काव्य विषय बन सकती है ''उसके लिए आवश्यक है कि रचनाकर विज्ञान की गहराई को हृदयंगम कर उसे काव्यात्मक रूप प्रदान करे।''

साठोत्तरी कविता की ध्वंसात्मक परम्परा में वैज्ञानिक दृष्टि का तथ्य परम्परा से आगे हटकर नयी दृष्टि की मांग करता है–

''मेरी गोद में भूगोल
बाहों में आकाश
आँखों में
ग्रह नक्षत्र की दौड़ती
स्वर्ण रेखा
आज मैनें अपने को विराट होते देखा।''

मानव समाज की आधुनिक जटिल संरचना में वैज्ञानिक तकनीक ने शुभा ओर अशुभा दोनों तत्वों को उकेरा है। इस तकनीक ने मानव जीवन को मूल्यवान बनानेवाले मनोभावों को और चैतन्य बना है। आज हर वस्तु को भौतिक परिप्रेक्ष्य में समझने की बात अस्वीकृत होती जा रही है। ''विश्लेषण'' ज्ञान को विस्तार देता है। आज सौंदर्य–बोध का रूप बदल गया है, यंत्र उद्योग, महानगरों का विस्तार आदि ने मानव जीवन में घुटन और अकेलापन भर दिया है। सर्जन के धरातल पर कवि क्षण को भोगता हैं–

''वाल्मीकि
मेरे लिए नहीं
मैनें नहीं भोगा है
किसी अन्य का सुख
सृजन प्रक्रिया में।''

युवा लेखन का विद्रोही स्वर तर्क पर आधारित हो गया है। आधुनिक–बोध व वैचारिक पक्ष की खाई गहरी हो रही है। इतनी कि ये एक हो गये है और कवि आधुनिकीकरण को आधुनिकता मान बैठता है।

''आधुनिक वैज्ञानिक दर्शन ने ज्ञान को सापेक्ष माना है जो केवल मात्र ऐन्द्रिय या भौतिक नहीं हैं, पर मूलतः ज्ञान एक सीमा के बाद तात्विक क्षेत्र को स्पर्श करता है जो विज्ञान भी कर रहा है।''

विचार दर्शन की यह प्रक्रिया एक गतिशील दशा है जो ज्ञान को समय सापेक्ष मानकर गतिशील होती हैं। आज आधुनिकता की अवधारणा वैज्ञानिक तकनीक व प्रस्थापनाओं से संवलित है। इस धारणा का नया आयाम समष्टि और व्यष्टि दोनों को ही समाहित करता चलता है।

''जब किसी समाज के गर्भ में नया समाज कुलबुलाने लगता है तो शक्ति इस जन्म में दाई का रोल अदा करती है।'' जहां तक इस शक्ति का प्रश्न है यह ''शक्ति'' क्या है ? एक बन्दूक की नली की शक्ति और दूसरी जनचेतना की नली। जो शक्ति बन्दूक से निकलती है वह आतंकवादी तंत्र का प्रतीक है। आज की आधुनिक दुनिया इन्हीं दो तंत्रों के इर्द–गिर्द सिमटती जा रही है। अतः आधुनिक दुनिया इन्हीं दो तंत्रों के इर्द–गिर्द सिमटती जा रही है। अतः आधुनकि बोध में तंत्रों की सामाजिक व्यवस्था, विचार प्रक्रिया तथा नगरबोध की सम्मिलित प्रक्रिया एक साथ कार्य करती है सामाजिक व्यवस्था, कलासाहित्य, दर्शन, इतिहास तथा अर्थतंत्र आदि की एक विकासात्मक संयोजित प्रक्रिया है जो सामाजिक ढांचे को बदलती भी है और दूसरी ओर विचार दर्शन की नई भूमिका भी पस्तुत करती है। यह इतिहास–बोध केवल राजनैतिक घटनाओं का इतिहास नहीं है, वह एक सांस्कृतिक क्रम है, जिसके अध्ययन से इतिहास के नैतिक रूप की परिकल्पना होती है जिसमें आम आदमी की आकांक्षाओं का स्पंदन प्राप्त होता है।''

''हमारा सृष्टा
हमारे मुखों से
क्रान्ति और विद्रोह के शंख बजाता रहा
और अपने जीवन में

अपने मुख से
एक शर्मनाक समझौता परस्त भाषा का
उच्चारण करता रहा।''

साठोत्तर कविता में आम आदमी सबसे अधिक प्रखर होकर आया है। आज कविता का मूल यही मानस स्पन्दन है जिसमें असन्तोष ओर विद्रोह का स्वर है। रचनाकार जिस परिवेश को जीता है उसमें कुछ अन्वेषण का प्रयास करता है। साठोत्तर कविता गंदगी के बीच सुगन्ध खोजने की प्रक्रिया है। सामाजिक अस्वीकार की यह स्थिति एक नवीन समाज को खोजे जाने की भंगिमा है। यह भंगिमा समाजिक, आर्थिक विसंगतियों के फलस्वरूप उत्पन्न हुई। समाज में परिवेश की घुटन उस स्थिति का नक्शा खींचती है जहां चीखते–चीखते वाणी गुम हो चुकी है और मुंह से रक्त टपकने लगा है। विवशता की अति सीमाओं को पार करती युवा मन की बेचैनी प्रतीक्षरत है–

''मुझमें तड़प रही है
वाणी रहित होने की स्थिति
मुहं से टपक रहा है रक्त
और तुम तालियां पीटते
कब तक मापते रहोगे मेरी यातना।''

इस कविताओं में एक आक्राश, घुटन, तनाव को जो बिम्ब है समाज की संक्रान्ति को प्रतिबिम्बत कर रहा है। एक साधक वक्त्वय भी है जहां सही की तलाश हैं,

''एक सही कविता
पहले
सार्थक वक्त्वय होती है।''

आज के युग का सबसे बड़ा संकट यह है कि सारा सार्वजनिक विशेषकर राजनीतिक जीवन स्वार्थ और कुरसी के चारों और घूम रहा है। निर्धनतम परिवारों की मुक्ति का लक्ष्य चूक रहा है। प्रतिदिन बलात्कार, हिंसा, शोषण के इस शोर में कवि की शक्ति दिग्भ्रमित हुई है। शक्ति की पुकार है बिना इसके जीवन के सौंदर्य तत्व की उपलब्धि दुर्लभ है–

''सत्य शिव अनुरक्ति चाहिए
ज्ञान कर्म भय भक्ति चाहिए
जीवन के सौंदर्य तत्व को
आदि शक्ति की शक्ति चाहिए
कोई मंजिल दूर नहीं है
केवल दृढ़ अनुरक्ति चाहिए।''

कविता का दायित्व है कि वह लोगों को यह महसूस करने की शक्ति दें कि विभाजन हमारे विनाश का कारण बनेगा। जात–पात हमारी शक्ति को खंडित कर देगी। हमारा अपनी भाषा के प्रति प्रेम अपनी पहचान को बरकरार रखेगा। देश की अंखडता पर प्रश्न चिन्ह लगा हुआ है। साम्प्रदायिकता व क्षेत्रवाद का जहर सारी अखंडता को अपनो गिरफ्त में ले रहा है। इस स्थिति में समाज का स्वरूप विखंडित होना स्वाभाविक है। समन्वयवादी संस्कृति की रक्षा व्यक्तिगत भेदों को मिटाने और भाषा की एकात्मकता से ही हो सकती है,

''मेरा भविष्य हादसों के पार जायेगा,
हां, वर्तमान आंधियों में पा रहा हूं मैं
अपनी जमीन छोड़कर जाते हुए लोगों
घबराओं नहीं आसमान ला रहा हूं मैं।''

साठोत्तरी कविता आम आदमी को जीवन बनाने की प्रक्रिया हैं और यह आदमी निम्न ओर मध्यम वर्ग का है। कविता इस आदमी को जीने की तमीज बताना चाहती है–

''क्या यह व्यक्तिव बनाने की
चरित्र चमकाने की
खाने कमाने की
चीज है
ना भाई ना
कविता
भाषा में आदमी होने की तमीज है।''

धूमिल की ''मोचीराम'' कविता में चीख विद्रोह और क्रान्ति की सूचक है जिसमें आदमी की असलियत और उसकी नियति के प्रति तीखा एहसास है। चुप और चीख अपने फर्ज अदा करते है–

''जबकि मैं जानता हूं
कि इंकार से भरी हुई एक चीख

''आज राजनीतिक उपनिवेशवाद इस दुनिया से पलायन कर चुका है पर एक दूसरी तरह का उपनिवशवाद कह सकते हैं अपनी जगह को मजबूत कर रहा है और हमारी तीसरी दुनिया उसके चंगुल में फंसती जा रही है। उसकी संस्कृति, उसकी निजता सब कुछ विलीन होती जा रही है। उसकी भाषा उससे छिनती जा रही है। और वह इससे बेखबर है।''

''यह तीसरी दुनिया कैपटलिस्ट दुनिया और कम्युनिस्ट दुनिया के बीच में ऐसी फंस गयी है जैसे दांतों के बीच जीभ। इनसे अपने आपको बचाना बड़ा कठिन है।''

अंग्रेजी शासन के दौरान एक सुविधाभागी वर्ग पनपा जिनका आचरण आत्मकेन्द्रित था। इसी का असर आज तक हमारी अर्धनीति पर है। आर्थिक कर नीति, व्यापारों में घाटा, आयात नियति हर क्षेत्र में एक धांधली है। बेकारी की समस्याएं बढ़ रही है। अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों की कठपुतली बनना नियति बन रहो है, दश की। साहित्य इन आर्थिक विसंगतियों से छूटा नहीं है।

वेतन भोगी बुद्धिजीवी द्वैतमन के भावों को लेकर जी रहा है। का दर्द है,

''क्यों नहीं काट पाता हूं अपने को
जिन्दगी के इस घटिया दौर से ?
दूसरे दर्जे के बीमार दिमागों से
जो बेचते फिरते है अपना दद
पैसा कमा चुकने के बाद वाला दर्द
कुछ भला, शरीफाना
उंचा करने से राकनेवाला दर्द
एक औरत का जिस्म छोड़कर
दूसरे जिस्म से लथपथाता दर्द
दर्द जो उबाता है
उबकाई लाता है
जम्हाई लाता है
एक और पेग चढाने को मजबूर करता है
क्यों नहीं....।''

साठोत्तरी कविता में आदमी का दर्द है। धनीभूत व्यथा तब ज्यादा है जब त्यौहार मनाने के लिए पैसे नहीं होते। कैसी दिवाली और कैसी इस व्यवस्था में दवा नकद

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-V* January- 2016

मिलती है ओर दर्द उधार मिलता है। सत्ता ओर जनता बुरादे सी सुलग रही है।

''मंहगाई की सुरसा
सिर पर सवार
कैसी दिवाली कैसा त्यौहार
जलता है पेट और
आँखों में पानी
नानी सुनाए परी की कहानी
रोटी नहीं खाते
राजकुमार
कैसी दीवाली कैसा त्यौहार है।

देश की छोटी–बड़ी योजनाएं औद्योगिक विकास का मुखौटा पहन कर लूट और शोषण का चक्र चला रही है। ये योजनाएं विकास की नयी मंजिल के नाम पर नदियों, पहाड़ियों, घाटियों व हरे भरे वृक्षों पर कोढ़ है। जनता में शेयरों का सही बंटवारा नहीं होता । इस चक्रव्यूह में काम करने वाले कामगार असुरक्षित जीवन जी रहे हैं। मजदूरों के भोजन की बेजुबान पोटलियां उस आधार की शक्ति शिला है जिन्हें राजनेता योजनाबद्ध करते हैं। इमारतें सीमेंट की जगह बालू की मिलावट से माटी का ढेर बन रही है। पिछड़े क्षेत्रों में शोषण की गति अधिक तेज है। महुआ काकर सड़कों पर ठोकर खाते मजदूर झूठे नाटकों के शिकार है ओर हलाल हो रहे हैं। अर्थ के शोषण की इस प्रक्रिया में दवा उपचार का कोई संदर्भ नहीं है। शर्म आने लगी है कौन–सा दिन होगा जब आस्तीनों से सांप नहीं अमृत वर्षा करने वाले निकलेगें। शहीद तो लाल रंग देश को देता है ओर राजनेता उसमें चूना लगा देते हैं। हम कल भी गरीब थे आज भी गरीब हैं और गरीब ही रहगे। ये कसी अर्थव्यवस्था है एक लंगोटी बची रह गयी है :–

''समझ गया सरकार
आप ने ये कैसी अर्थव्यवस्था रची है
गरीब के पास केवल एक लंगोटी बची है
लंगोटी बचाते हैं तो पगड़ी जाती है
अपने को आदमी कहने में शर्म आती है।''
और बेकारी बढ़ती देखकर प्रश्न करता है–––
''सरकार आप को नहीं पता
सारा देश बेकारी से परेशान है
आपके पास इसका क्या निदान है।''
बहू को जलाने के लिए मिटटी तेल की व्यवस्था नहीं––
''और बाबा
यदि मिटटी का तेल नहीं मिलता
तो सास बहू के लिए कहीं से प्रबन्ध करती है।''
मांगने पर भीख नहीं मिलती––
''सरकार हम तो मदद के नाम पर
कोई दो मुटठी भीख नहीं देता
बेटियां बिकने को तैयार हैं
कोई इज्जत नहीं लेता।''

निराला की 'ताड़ती पत्थर' से शुरू होकर सर्वेश्वर की कविताओं में यह नयी और प्रखर होकर बही है। सरकारी प्रयासों के कारण भारत में कोई संवेदना विकसित ने होकर मिश्रित रूप उदय हुआ है। इस मिश्रित व्यवस्था भारतीय कविता पनपी है। डॉ0 शिवमंगल सुमन, रामेश्वर शुक्ल अंचल में तीखा है। सभी मानव कब सुखी होगें का सपना देखने वाला साठोत्तर की भी इस गलित कुछ से छुटकारे का उपाय करता है। देश की व्यवस्था चरम वह भी क्या करें–

''मैं उस देश का क्या करूं
जो धीरे–धीरे लड़खड़ाता हुआ
मेरे पास बैठ गया है।''

केवल अर्थ नहीं समग्र क्षेत्र में क्रान्ति का आहवाहन ये कवि कर रहे हैं मूल्य को पोस्टरी संस्कृति से बचाकर सत्य की खोज की जा सकती है ओर से बचा जा सकता है। ''आत्मजयी'' का नचिकेता कुछ यही संदेश देता है।

''मुझको इस छीना–झपटी में विश्वास नहीं
मुझको इस दुनियादारी में विश्वास नहीं,
हर प्रगति चरण मानव का घातक पड़ता है
हम जीते आपाधापी और दबावों में
हम जितना पायें कम ही लगता है।''

व्यथा इस कदर बढ़ चुकी है कि अपने ही कन्धो पर अपने ही जनाजे उठने की प्रतीक्षा की जा रही है। बढ़ती महंगाई में जीवन एक भर–पोषण का दर्द साठोत्तर कवि का व्यंग्य में अधिक तीखा हुआ है। अब अपने आदमी कटने में भी लज्जा आती है। दो वक्त की रोटी के इंतजाम में उम्र गुजरने का दर्द वर्तमान समाज के खोखलेपन पर साक्ष्य है। ''साठोत्तर कवि जानता है ''आर्थिक मूल्य ही जहां एक मात्र या श्रेष्ठ मूल्य हो वहां कविता का मूल्यहीन हो जाना स्वाभाविक है।''

दिनकर सोनवलकर, नागार्जुन, रघुवीरसहाय, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने इस प्रश्न को उठाया है। पूंजी से जुड़कर कोई समाज प्रगति नहीं कर सकता।

इस परिवेश में समाज के जिस रूप की कल्पना की जा सकती है उसमें नरक का ही साक्षात दर्शन हो सकता है। इस व्यवस्था का शिकार मध्यम व निम्न वर्ग है जो परिवेश के कटा है। आर्थिक शोषण के कारण समग्रता का सपना देखकर उसको पूरा करने की दौड़ में उम्र गुजार देता है। घर की समस्या बड़ी है जो एक सपना है ओर सपना ही रहना है। ''हमने भविष्य का ख्याल किए बिना समस्याओं पर गौर किए बिना एक ही जगह उद्योग बिठाये और यह नहीं सोचा कि यहां काम करने वाले लोग, शहर की, देश की आर्थिक उन्नति में मदद करने वाले लोग कहां रहेग।''

और भी,

''कीमतें बढ़ने के पीछे प्रमुख कारण है 1976 में बना शहरी भूमि सीमा नियंत्रण कानून।''

आणविक युग में विकासशील दशों के आर्थिक नीतियों ने शांति को खतरा पहुचाया है। यह आर्थिक संकट विश्व स्तर पर सामाजिक अशांति का कारण बन सकता ह। मूल्यों की टकराहट के इस दौर में कल्याण कार्यों में लगाये जाने वाला धन कटौती के रूप में अंशतः सफल नहीं हो सकता है।

यो अन्तर्राष्ट्रीय विकास स्तर पर हल ढूंढने का प्रयास है–''दो दिनों पूर्व जिनिवा में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हल ढूंढने का प्रयास है– ''दो दिनों पूर्व जिनिवा में अन्तर्राष्ट्रीय विकास नीति की परीक्षा के तरीकों पर आयोजित एक गोष्ठी में 100 से अधिक देशों के प्रतिनिधियों के साथ बोलते हुए श्री बौरेवा ने चेतावनी दी

कि समग्र ढांचे में परिवर्तन हुए बिना आगामी वर्ष, दो या तीन वर्षो के समक्ष अति गम्भीर राजनीतिक व सामजिक समस्याएं खड़ी आप में काफी जटिल और कठिन होगी। इसका विश्व शांति पर बुरा असर हो सकता है।

आर्थिक विकटता में चोटों की राजनीति भी प्रमुख कार जानेवाला अपव्यय ओर राजनेताओं के स्वागत में लगा धन व को बढ़ाता है। सरकारी खर्चों का कोष इसे और अधिक कि।

निष्कर्ष

साठोत्तर कवि इन्हीं समस्याओं का हल खोजकर विशेष बात करता है। केवल समाजवाद की चर्चा भर कर लेना प्रगति के नाम पर होने वाला शोषण मन में वितृष्णा पैदा व तत्पर हो जाता है। इस अभिव्यक्ति में साठोत्तरी हिन्दी कवि आक्रोश, द्वन्द्व आर विवशता में स्पष्ट हुई है। समय की आहट वाले आर्थिक परिवर्तन एक गड़बड़ी पैदाकर शांति भंग कर ने राजनीतिज्ञों विचारकों और कवियों के दृष्टिकोण को बदला है। क्रान्ति का आहान करती हैं, परन्तु इन धारणाओं में कवि रक्तहीन है और साम्यवाद रक्तक्रान्ति का। साठोत्तर कवियों की विचार धारा विश्लेषण प्रतीत होता है। कवियों में दोनों ही धारणाएं मिलती व शोषित वर्ग का हाथ मजबूत करने की बात करते हैं मशीनों, राष्ट्रीयकरण की मांग का स्वर प्रमुख रहा है। साठोत्तर कवि नहीं बल्कि विधानपूर्वक क्रान्ति की बात करते हैं। समाजवाद से हिन्दी साहित्य हमशा प्रभावित रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अरी ओ करूणामयी :अज्ञेय
2. अभी बिल्कुल अभी : केदारनाथ सिंह
3. समीप और समीप : रमेश कौशिक
4. कादम्बिनी :डॉ0 वीरेन्द्र शर्मा
5. सारिका : शिवकुमार गुप्त
6. संसद से सड़क तक : धूमिल
7. जनवाद का एगमार्क : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना
8. श्री वर्षा : कमलेश्वर
9. गर्म हवाएं : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना